International Journal of Sanskrit Research 2018; 4(3): 78-81

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2018; 4(3): 78-81
© 2018 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 16-03-2018
Accepted: 17-04-2018

शताब्दी सिंह परिहार
शोधार्थी – संस्कृत विभाग
कला संकाय, इं.क.सं.वि.वि.,
खैरागढ़, छत्तीसगढ़, भारत

Correspondence
शताब्दी सिंह परिहार
शोधार्थी – संस्कृत विभाग
कला संकाय, इं.क.सं.वि.वि.,
खैरागढ़, छत्तीसगढ़, भारत

श्रीमद्भागवत महापुराणः एक परिचय

शताब्दी सिंह परिहार

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति में सनातन परम्परा दृष्टिगत होती है। यही सनातन परम्परा वेदों एवं पुराणों में दिखाई देती है। वेद चार हैं– ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद। सनातन धर्म–ग्रन्थों में वेद, स्मृति, पुराण आदि सम्मिलित हैं। इन ग्रन्थों का सनातन संस्कृति में विशेष महत्त्व है। वेदों को ऋषि द्रष्टारा कहा गया है। अर्थात् इन्हें ऋषियों द्वारा देखा गया है तथा बाद में लिपिबद्ध किया गया। जो वेदों का अनुसरण करे, उसे 'स्मृति' कहते हैं, जिनकी संख्या अठ्ठारह मानी गई है। स्मृतियों में वेदों का सारतत्त्व निहित है, जिसके पश्चात् पुराण आते हैं। पुराणों का सनातन संस्कृति में विशेष महत्त्व है। पुराण अर्थात् जो 'पुराना' होकर भी नया हो, उसे पुराण कहा गया है। पुराण अठ्ठारह हैं तद्नुसार अठ्ठारह उप–पुराण भी माने गये हैं। इन पुराणों को दो भागों में विभक्त किया गया है– वैष्णव एवं शैव। जिन पुराणों में विष्णु की महिमा बताई गई है, उन्हें वैष्णव पुराण और जिनमें शिव की महिमा का बखान किया गया है उन्हें शैव पुराण कहा जाता है। इन अठ्ठारह पुराणों में श्रीमद्भागवत को 'महापुराण' की प्रतिष्ठा प्राप्त है एवं अपेक्षाकृत अधिक प्रसिद्धि भी इसे ही प्राप्त है। श्रीमद्भागवत एक वैष्णव पुराण है, जो इस सम्प्रदाय का प्रमुख पुराण होने के साथ–साथ सम्पूर्ण समाज में लोकप्रिय एवं प्रतिष्ठित है। यह हर घर में पढ़ा एवं सुना जाने वाला पुराण है। इस पुराण में धर्म, समाज, दर्शन, राजनीति आदि विषयों की चर्चा है। पुराण वेदों का उपब्रह्मण है तथा इसकी रचना का आधार वेदों को जन–जन तक प्रेषित करना ही है। यद्यपि पुराणों में वेद के सारतत्त्व निहित हैं तथापि उसकी भाषा लौकिक है। अनुमानतः पुराणों की लौकिक भाषा में होने का कारण यह है, कि उसे जनसाधारण सरलता एवं सहजता से आत्मसात कर सके। इसी आधार पर पुराणों का मूल 'वैदिक भूमि' को भी कहा गया है।

वैदिक पृष्ठभूमि

भारतीय संस्कृत वाङमय में पुराण साहित्य का विशेष महत्त्व है। भारतीय संस्कृति को जानने के लिए पुराणों के अध्ययन की महती आवश्यकता है। पुराण भारतीय संस्कृति का मेरुदण्ड है। जो प्राचीन इतिहास मन्दिर के सुवर्ण कलश एवं अनादि काल से संचित विद्याओं की भूमि के रूप में प्रतिष्ठित है। पुराण शब्द की व्युत्पत्ति पाणिनि, यास्क तथा पुराणों ने भी की है। पाणिनि ने अष्टाध्यायी में 'पुराभवम्' (प्राचीनकाल में होने वाला) इस अर्थ में 'सायं चिरं प्राह्णे–प्रगेऽव्ययेभ्यश्ट्युयुलो तुट् च' [1]। पाणिनि के इस सूत्र से 'ट्यु' प्रत्यय करने एवं 'तुट्' के आगमन होने पर 'पुरातन' शब्द निष्पन्न होता है, किन्तु स्वयं पाणिनि ने ही अपने दो सूत्रों– 'पूर्वकालैक–सर्व–जरत्–पुराण नव–केवलाः समानाधिकरणेन'। [2] तथा 'पुराण–प्राक्तेषु ब्राह्मण कल्पेषु'। [3] पुराण शब्द का प्रयोग किया है, जिससे तुडागम का भाव निपातनात् सिद्ध हो जाता है। अर्थात् पाणिनि की इस प्रक्रिया के अनुसार 'पुरा' शब्द से 'ट्यु' प्रत्यय अवश्य होगा, परन्तु नियम प्राप्त 'तुट्' का आगम नहीं होगा। यास्क के निरूक्त के अनुसार 'पुराण' की व्युत्पत्ति 'पुरा नवं भवति'। [4] अर्थात् जो पुराना होकर भी नया हो।

लौकिक भाषा में पुराणा वस्त्र, पुराणी पुस्तक कहकर पुराण की प्राचीनता को सिद्ध करता रहा है, जो प्राचीनकाल से चला आता हो, उसी को पुराण कहते हैं। प्रारम्भिक अवस्था में यह शब्द 'पुराने आख्यान' के रूप में प्रचलित था। इतहास के साथ ही यह शब्द ब्राह्मण, उपनिषद् और प्राचीन बौद्ध साहित्य में आया है। ये भी वेद के व्याख्या ग्रंथ हैं। इन पुराणों में महाभूतों की सृष्टि, समस्त चराचर की सृष्टि, वंशावली मन्वनतर वर्णन और प्रधान वंशों के व्यक्तियों का क्रमशः वर्णन है। [5]

महाभारत में भी पुराण का वर्णन मिलता है– 'पुराणपूर्णचन्द्रेण श्रुतिज्योत्सना प्रकाशिता। [6] महाभारत के अनुसार पुराणरूपी पूर्ण चन्द्रमा के श्रुतिरूपी चन्द्रिका छिटकी हुई है अर्थात् पुराण श्रुति के अर्थ को विस्तार से प्रकाशित करता है–

पुराण और स्मृति –स्वाध्यायं श्रावयेत् पित्र्ये धर्मशास्त्राणि चैव हि।
आख्यातानीतिहासांश्च पुराणानि खिलानि च।। [7]

वेद, मनुस्मृति आदि धर्मशास्त्र, सुपर्ण तथा मैत्रावरूण आदि की कथायें, महाभारत आदि इतिहास, ब्रह्म, पद्म आदि पुराण और शिवसंकल्प आदि श्रीसूक्त आदि खिल इन सबको पितृ–श्राद्ध में भोजनार्थ निमंत्रित ब्राह्मणों को सुनावें।

इस प्रकार शोधार्थी ने पुराणों के संदर्भ में विविध परिप्रेक्ष्य के आधार पर चिन्तन किया है। पुराणों की यह प्राचीनता शोधार्थी की दृष्टि में पुराणों की यह प्राचीनता शोधार्थी की दृष्टि में वैदिक पृष्ठभूमि में प्रवेश कराती है।

प्राचीन काल में पुराणों का दो रूपों में उल्लेख प्राप्त होता है प्रथम वृत्तों के विषय में विद्या के रूप में और द्वितीय एक विशिष्ट साहित्य या ग्रन्थ के रूप में। पुराणों की प्राचीनता का संज्ञान लेने के लिए वैदिक का अवलोकन आवश्यक है।

श्रीमद्भागवत का काल परिचय

श्रीमद्भागवत के रचनाकाल के सम्बन्ध में विद्वानों के मत–मतान्तर हैं। पूर्व में कुछ आचार्यों द्वारा भागवत के काल को ज्ञात करने का प्रयास किया गया है। श्रीमद्भागवत में पुराण के दस लक्षणों का विशद् निरूपण मिलता है, जिससे उसकी तिथि का अनुमान किया जा सकता है। इस पुराण के उद्धरण मिताक्षर, अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका तथा कल्पतरु आदि प्राथमिक निबन्ध ग्रंथों में नहीं मिलते। अतः इसे पश्चात् कालीन पुराण माना गया है तथा उसकी तिथि पांचवी शती से लेकर एक हजार ईसा तक प्रतिपादित किया जा सकता है। [8]

ÞSome of the evidancesa about an early date of the Bhagwata are it's mentioned by Al-Beruni (11th Century), Abhivana Gupta (10th-11th Century) in his 'Gitarthasangraha Gaudapada' (5th Century). In his 'Uttara-Gita-Bhasya'.ß [9]

^According to arothodox tradition, the Bhagwata was composed in the period between Parikshit and Nanda.* [10]

^Dr. Hazra opinesa that the period of the farmer work is not earlier than 950 A.D. Thus, the lower limit of the *Bhagwata* can be safely determined as the 9th century A.D. [11]

^The *Bhagwata's* indebtedness to *Sankara*, *Dandih* and *Mangha provesa* that the *Bhagwata* is later than them i.e. it belongs to the 9th century A.D.*[12]

उक्त प्रमाणों के आधार पर श्रीमद्भागवत का काल लगभग 9वीं शताब्दी प्रमाणित है। अल–बरूनी के अनुसार– अभिनवगुप्त के गीतार्थ संग्रह और गौणपादा के उत्तर–गीता–भाष्य में भागवत के वर्णन से अनुमान लगाया जा सकता है, कि भागवत् इनसे पूर्व रचित है। डॉ. हाज़रा ने श्रीमद्भागवत महापुराण का काल 9वीं–10वीं शताब्दी के मध्य माना है। आचार्य शंकरा, दण्डी और माघ ने प्रमाणित किया है, कि भागवत उनके बाद रचित है। अतः ईसा पश्चात् 9वीं शताब्दी में भागवत को अधिकृत माना जा सकता है।

विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र ने वाचस्पति गैरोला एवं बलदेव उपाध्याय के मतों के आधार पर श्रीमद्भागवत के काल के सम्बन्ध में उल्लेख किया है, कि– 'पाश्चात्यपद्धत्या पुराणादिग्रन्थानालोचयद्भिः समीक्षकैः श्रीमद्भागवतमप्यर्वाचीग्रन्थ इत्यभिमतम्। प्रायस्त्वेभिरेतस्य रचनाकालो भारतीयेतिहास चक्रे गुप्तकाल एवोपन्यस्यते, अथ चैतेषां मते ख्रीष्टस्य षष्ठशतकमेव परमावधिः भागवतरचनायाः।' [3] इनके मतानुसार गुप्तकाल अर्थात् ईसा की छठवीं शताब्दी से पूर्व श्रीमद्भागवत रचनाकाल स्वीकार किया है। इसी प्रकार कुछ विद्वानों ने विष्णु, भागवत और वराह इन तीनों को 12वीं शती का रचित माना है। पाश्चात्य विद्वानों में पार्जिटर और विन्टरनित्ज महोदय ने पुराणों के काल निर्धारण की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रयास किया है। भारतीय विद्वानों ने लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, रामचन्द्र दीक्षितार, डॉ.काशी प्रसाद जायसवाल, डॉ. हाजरा तथा डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल आदि के प्रयास भी महत्त्वपूर्ण हैं।

श्रीमद्भागवत के स्कन्धों का संक्षिप्त परिचय

भागवत में 12 स्कन्ध है जिसमें प्रथम स्कन्ध में 18, द्वितीय स्कन्ध में 10, तृतीय स्कन्ध में 33, चतुर्थ स्कन्ध में 31, पंचम स्कन्ध में 26, षष्ठ स्कन्ध में 19, सप्तम स्कन्ध में 15, अष्टम स्कन्ध में 24, नवम स्कन्ध में 24, दशम स्कन्ध में 90, एकादश स्कन्ध में 31 और द्वादश स्कन्ध में 13 अध्यायों के संकलन से कुल 335 अध्याय हैं।

दशलक्षण से लक्षित भागवत में भारतीय पुराण परम्परा में श्रीमद्भागवत के बारह स्कन्धों को अंगीकृत किया गया है और श्रीमन्नारदीयपुराण में द्वादश स्कन्धों की कथानुक्रमणिका प्राप्त होती है–

"तत्र तु प्रथमें स्कन्धे सूतर्षीणां समागमे।
व्यासस्य चरितं पुण्यं पाण्डवानां तथैव च।।
परीक्षितमुपाख्यानमितीदं समुदाहृतम्।
परीक्षिच्छुकसंवादे सृतिद्वयनिरूपणम्।।
ब्रह्मनारदसंवादे देवताचरितामृतम्।
पुराणलक्षणमं चैव सृष्टिकारणसम्भवः।।
द्वितीयोऽयं समुदितः स्कन्धो व्यासेन धीमता।
चरितं विदुरस्याथ मैत्रेयेणास्य संगमः।।
सृष्टिप्रकरणं पश्चाद् ब्रह्मणः परमात्मनः।
कापिलं सांख्यमप्यत्र तृतीयोऽयमुदाहृतः।।
सत्याश्चरितमादौ तु ध्रुवस्य चरितं तथा।
पृथोः पुण्यसमाख्यानं ततः प्राचीनबर्हिषम्।।
इत्येष तुर्यो गदितो विसर्गे स्कन्ध उत्तमः।
प्रियव्रतस्य चरितं तदवंश्यानाम् च पुण्यदम्।।
ब्रह्माण्डान्तर्गतनां च लोकानां वर्णनं ततः।
अजामिलस्य चरितं दक्षसृष्टि निरूपणम्।।
वृत्राख्यानं ततः पश्चान्मरुतां जन्मपुण्यदम्।
षष्ठोऽयमुदितः स्कन्धो व्यासे परिपोषणे।।
प्रह्लादचरितं पुण्यं वर्णाश्रमनिरूपणम्।
सप्तमो गदितो वत्स वासनाकर्मकीर्त्तने।।
गजेन्द्रमोक्षणाख्यानं मन्वन्तरनिरूपणम्।
समुद्रमन्थनं चैव बलिवैभवबन्धनम्।।
मत्स्यावतारचरितमष्टमोऽयं प्रकीर्तितः।
सूर्यवंशसमाख्यानं सोमवंशनिरूपणम्।।
वंशानुचरिते प्रोक्तो नवमोऽयं महामते।
कृष्णस्य बालचरितं कौमारं च वृजस्थितिः।।
कैशोरं मथुरास्थानं यौवनं द्वारकास्थितिः।
भूभारहरणं चात्र निरोधे दशमः स्मृतः।।
नारदेन तु सम्वादो वसुदेवस्य कीर्तितः।
यदोश्च दत्तात्रेयेण श्रीकृष्णेनोद्धवस्य च।।
यादवानां मिथोऽन्त्यश्च मुक्तावेकादशः स्मृतः।
भविष्यत्कलिनिर्देशो मोक्षो राज्ञः परिक्षितः।।
वेदशाखाप्रणयनं मार्कण्डेयतपः क्रिया।
सौरीविभूतिरुदिता सात्वती च ततः परम्।।
पुराणसंख्याकथनमाश्रये द्वादशो ह्ययम्।
इत्येवं कथितं वत्स श्रीमद्भागवतं तव।।
इति।।" [14]

प्रथम स्कन्ध – प्रथम स्कन्ध को अधिकार स्कन्ध भी कहा जाता है। दस लक्षण से लक्षित भागवत में 'अधिकारी' (अध्येयता) किसी प्रकार का होना चाहिए, इस प्रसंग को विभिन्न कथाओं के द्वारा स्पष्ट किया गया है। इस धर्म का वही अधिकारी है, जो अपराधियों के प्रति विशाल हृदय में प्रेम रखकर उन्हें क्षमा कर सकता हो और विपत्ति के समय भगवान् को स्मरण करके उसे सानंद स्वीकार करता है। सप्तम् अध्याय में द्रौपदी के पांच पुत्रों के हनन्कर्त्ता

अश्वत्थामा को अर्जुन के द्वारा बन्दी बनाना, ब्रह्मास्त्र से पीड़ित उत्तरा का श्रीकृष्ण को बुलाना। इस स्कन्ध में अर्जुन की माता पृथा का कृष्ण दर्शन न होने के कारण दुःखी होने का वर्णन, केवल दुःख से भगवत की प्राप्ति नहीं हो सकती। श्रीकृष्ण की प्रसन्नता से ही मुक्ति की प्राप्ति और दर्शन होंगे, का वर्णन है।

द्वितीय स्कन्ध – द्वितीय स्कन्ध को 'साधन स्कन्ध' भी कहा जाता है। जैसे भागवत को पढ़ने वाले अधिकारी का ज्ञान होना आवश्यक है, उसी प्रकार साधन के निरूपण के बिना परम तत्त्व का ज्ञान दृष्प्राप्य है। श्रीमद्भागवत रसिक इस स्कन्ध को 'साधन स्कन्ध' इस नाम से विभूषित करते हैं। इस स्कन्ध में दस अध्याय हैं, जिनमें भगवत प्राप्ति के तीन साधनों की व्याख्या है–

1. भगवत तत्त्व की ज्ञानविधि – प्रथम एवं द्वितीय अध्याय।
2. हृदय की निर्मलता – तृतीय एवं चतुर्थ अध्याय।
3. विचार की पराकाष्ठा – मनन – पंचम से दशम अध्याय।

'तस्माद् भारत सर्वात्मा भगवानीश्वरो हरिः।
श्रोतव्यः कीर्तितव्यश्च स्मर्तव्यश्चयेच्छताऽभयम्।।' [15]

तृतीय स्कन्ध – इस स्कन्ध में दस लक्षणात्मक भागवत के प्रथम लक्षण 'सर्ग' की विस्तारपूर्वक व्याख्या की गई है। इसीलिए इस स्कन्ध को 'सर्गस्कन्ध' कहा गया है। इस स्कन्ध के पन्म अध्याय में 'विदुरमैत्रेय संवाद' के द्वारा सृष्टिक्रम का निरूपण किया गया है। इसका बारहवें अध्याय तक अमूर्त सर्ग रूप के वर्णन के बाद प्रकृति के तीनों गुणों को स्पष्ट करने के लिए कुछ गाथाओं का एकत्रीकरण किया गया है। षड्विंश अध्याय में पुनः कपिलदेवहुति संवाद रूप में महातत्त्वादिभावों की उत्पत्ति से सर्ग (एव व्याकृतः) कहा जाता है। इस प्रकार निष्कर्षतः यह कह सकते हैं, कि चतुर्दशाध्याय के आरम्भ से उन्नीस अध्याय तक द्वितीय कश्यप कथा–प्रसंग के अन्तर्गत तमोगुण प्रधान सृष्टि की चर्चा की गई है।

चतुर्थ स्कन्ध – इस स्कन्ध को 'विसर्ग स्कन्ध' भी कहा जाता है। पूर्व वक्ताओं के अनुसार सृष्टि के विपरीत को विसर्ग कहा जाता है। इस स्कन्ध में ब्रह्माजी द्वारा ब्रह्माण्ड रूपी पात्र में पन्भूतात्मिका सृष्टि की चर्चा है तथा विपरीत दृष्टियों से विसर्ग की भी चर्चा है। इस स्कन्ध में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय का वर्णन है। श्रीमद्भागवत के अलग–अलग अध्यायों में उसकी व्याख्यान है।
सम्पूर्ण चतुर्थ स्कन्ध में एकत्रिंश अध्याय है, जिसके प्रथम से सप्त अध्याय तक दक्षवर्णन के माध्यम से धर्म पुरुषार्थ की चर्चा की गई है। भगवान् शिव का अपमान होने के कारण दक्षयज्ञ के ध्वंस होने से पुनः धर्म की स्थापना बताई गई है। इसके पश्चात् अष्टम से द्वादश अध्याय में ध्रुव कथा के माध्यम से पुरुषार्थ का निरूपण किया गया है। तत्पश्चात् ग्यारह अध्यायों में पृथुचरित का वर्णन, पृथ्वी के दोहन आदि कार्यों से कामपुरुषार्थ का सींत प्राप्त होता है। स्कन्ध के अन्तिम आठ अध्यायों में प्राचीनबर्हिनारद संवाद के अंतर्गत पुरर्निउपाख्यान के द्वारा मोक्ष रूपी पुरुषार्थ का सींत किया गया है।

पन्म स्कन्ध – इस स्कन्ध को 'स्थान स्कन्ध' भी कहा जाता है। लक्षण के आधार पर भगवान् विष्णु से सम्बन्धित मर्यादा एवं उनके नियम, जो निश्चित ही सृष्टि के विस्तार में सहायक होंगे। पन्म स्कन्ध में निम्न वर्णन प्राप्त होते हैं–

1. भूगोलवर्णन – 16, 18, 19, 20 अध्यायों में।
2. खगोलवर्णन – 21, 22, 23 अध्यायों में।
3. पातालवर्णन – 24, 25 अध्यायों में।

इसके अतिरिक्त सृष्टि पालन से सम्बनिधत नियमों का पालन करते हुए प्रियव्रत अग्नीघ्रा आदि राजाओं का चरित्र बताया गया है।

षष्ठ स्कन्ध – इस स्कन्ध को 'पोषण स्कन्ध' भी कहा जाता है। इस स्कन्ध का प्रथम प्रश्न जीव नरक आदि से कैसे मुक्त होगा, है–

'अधुनेह महाभाग यथैव नरकान्नरः।
नानोग्रयातनान्नेयात्तन्में व्याख्यातुंमर्हसि।।' [16]

उक्त प्रश्न के समाधान श्रीशुकजी विविध प्रायश्चित अनुष्ठान आदि का उपदेश देने के पश्चात् सारभूत में सिद्धान्त निरूपित करते हैं–

'न तथा ह्यघवान् राजन् पूयेत तप आदिभि।
यथा कृष्णर्पितप्राणस्तत्पूरुषनिषेवया।।' [17]

षष्ठ स्कन्ध में उन्नीस अध्याय हैं, जिन्हें तीन भागों में विभाजित किया गया है–

1. प्रथम से तृतीय अध्याय पर्यन्त – 'नाम' माहात्म्य।
2. चतुर्थ से द्वादश पर्यन्त – 'रूप' माहात्म्य।
3. त्रयोदश से एकोनविंश पर्यन्त – 'अर्चा पद्धति' माहात्म्य।

इस प्रकार चौथे लक्षण से युक्त इस अध्याय को 'पोषण स्कन्ध' कहा जाता है।

सप्तम स्कन्ध – इस स्कन्ध को 'ऊति स्कन्ध' कहा जाता है। 'ऊति' शब्द से जीव का वासना का ग्रहण किया जाता है। इसका सामान्य लक्षण विद्वानों द्वारा अविद्या बताया गया है। यह अविद्या पांच पर्वों में है– अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेश, अभिनिवेश रूप में है। इसी प्रकार विद्या को भी पांच पर्वों में बताया गया है– विद्या, तप, वैराग्य, आराधना, तत्त्वज्ञान।

अष्टम स्कन्ध – इस स्कन्ध के प्रथम अध्याय में आरम्भ से लेकर स्वायम्भू आदि चार मन्वन्तरों का वर्णन है। पन्म अध्याय में रैवतचाक्षुष मन्वन्तर, त्रयोदश में भविष्य मन्वन्तर, इन सातों का वर्णन और चतुर्दश में मनु आदि के कर्मों का पृथक्–पृथक् वर्णन है। अन्य अध्यायों में उचित धर्मो का प्रतिपादन करने वाले यज्ञजित, मोहिनी, वामन, मत्स्यादि मन्वन्तरों का बताया गया है। गजेन्द्र मोक्ष का सींत करते हुए श्रीभगवान् के धर्मतत्त्वों में व्याख्यान की चर्चा की गई है।

नवम स्कन्ध – नवम स्कन्ध में चौबीस अध्याय हैं। इसके बारह अध्यायों में सूर्य प्रधान तथा शेष में सोम प्रधान भगवान् के अवतार के कुलों का वर्णन है। सूर्यवंशी के कुलों के गुणों का वर्णन एवं चन्द्रवंशी कुलों के गुणों का वर्णन भी किया गया है। चौबीस अध्यायों में भगवान् के चौबीस अवतारों का ज्ञान होता है। इस प्रकार इस स्कन्ध को 'ईशानुकथा' स्कन्ध कहा जाता है।

दशम स्कन्ध – इस स्कन्ध के भागवत के आठवें लक्षण 'निरोध' का वर्णन है। भागवत के अनुसार– इस अविद्या चक्र का वास्तविक अवसान भागवत कथा श्रवण, मनन, ध्यान से उत्पन्न भगवत अनुराग से ही सम्भव है। भगवान् के उत्तम वर्णन उनके श्लोक में उपस्थित गुणों का अनुसरण ही संसार के रोगों का निवारण कर सकता है–

**'निवृत्ततर्षैरुपगीयमानाद् भवौषधाच्छोत्रमनोऽभिराताम्।
क उत्तमश्लोकगुणानुवादात् पुमान् विरज्येत विना पशुध्नात्।।'** [18]

अतः सम्यक् रूप से संसार के सभी बन्धनों का निरोध इस स्कन्ध के अन्तर्गत किया गया है। जीव की आत्मा, जागृत, स्वप्न, सुषुप्ति आदि अवस्था से स्वयं को अलग करते हुए तुरीय अवस्था का निरूपण किया गया है। अतः इस इस स्कन्ध को 'निरोध' कहा गया है।

एकादश स्कन्ध – प्रस्तुत स्कन्ध में मुक्ति का तात्पर्य स्पष्ट किया गया है। सांसारिक बन्धनों से निवृत्ति होने के पश्चात् स्वयं में

स्थित होना ही मुक्ति है। सांसारिक बन्धनों के मिथ्यात् का सींत इस स्कन्ध में किया गया है। इस स्कन्ध में मुक्ति के साधन तत्त्व को बताया गया है, यथा–

1. वसुदेव के लिए नारद का उपदेश – द्वितीय अध्याय।
2. मायावी संसार को पार करने का उपाय बताया गया है, बह्म कर्म का निरूपण किया गया है– तृतीय अध्याय।
3. श्रीकृष्ण उद्धव सम्वाद में अवधूत उपाख्यान – 6, 7, 8, 9 अध्याय।
4. स्वयं को, संसार बन्धन को, बद्ध और मुक्ति के उचित लक्षणों का कथन और भक्ति उपाय का वर्णन किया गया है।
5. भगवान् का हंस रूप में ब्रह्मा के लिए ज्ञानोपदेश आदि का वर्णन।

द्वादश स्कन्धः यह स्कन्ध श्रीमद्भागवत महापुराण का अन्तिम स्कन्ध है, जिसमें 'आभास' और 'विरोध' परम आश्रय भगवत स्वरूप कृष्ण के प्रमुख तत्त्वों को भागवतकार द्वारा प्रस्तुत किया गया है। यहाँ आभास, निरोध का पृथक्–पृथक् विवेचन किया गया है–

1. आभासः जिस प्रकार कटक, कुण्डल आदि स्वर्ण निर्मित आभूषण होने के बाद भी इनका पृथक्–पृथक् नाम होता है। उसी प्रकार एक ही ब्रह्म को देव, असुर और मनुष्य आदि नामों से पृथक्–पृथक् जाना जाता है।

2. निरोधः जिस प्रकार अग्नि में सभी आभूषण अपने–अपने नाम को त्यागकर केवल स्वर्णमय हो जाते हैं, उसी प्रकार मनुष्य ज्ञान अग्नि के द्वारा स्वयं को अलग करते हुए ब्रह्ममय हो जाता है।

3. आश्रयः आश्रय का पर्याय 'शरण' को जानना चाहिए। यह दो रूपों में दिखता है– साधनाश्रय और फलाश्रय।

विद्वानों ने पुराणों को वेदों का सार निरूपित किया है। वेदों के ज्ञान को जन–जन तक सरस रूप में पहुँचाने के लिए पुराणों का निर्माण किया गया है। विद्वानों ने अठ्ठारह पुराण एवं अठ्ठारह उप–पुराण माने हैं। पुराणों में पांच लक्षण एवं महापुराण में दस लक्षण बताये गये हैं। श्रीमद्भागवत की महापुराण के रूप में प्रतिष्ठा है तथा यह एक वैष्णव पुराण है। यह न केवल वैष्णव अपितु सम्पूर्ण समाज में एक प्रतिष्ठित पुराण है। भागवत के रचनाकाल के सन्दर्भ में विद्वानों में मत–मतान्तर है, किन्तु अधिकांश विद्वान इसे 9वीं शताब्दी ईसा में रचित मानते हैं। इस महापुराण में बारह स्कन्ध हैं, जिनमें अधिकारी, साधन एवं भागवत के दस लक्षणों का वर्णन किया गया है। श्रीमद्भागवत केवल एक धार्मिक ग्रन्थ नहीं, अपितु इसमें साहित्य, संस्कृति, समाज, दर्शन, राजनीति, वैज्ञानिकता सब कुछ समाहित है। यह भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि है।

संदर्भ सूची

1. महर्षिपाणिनिविरचित अष्टाध्यायी, 4/3/23, पृ.502
2. वही, 2/1/48, पृ.167
3. वही, 4/3/105, पृ.518
4. यास्कविरचित निरूक्त, 3/19, पृ.346
5. शर्मा, डॉ.मनमोहन, भारतीय संस्कृति और साहित्य, चित्रगुप्त प्रकाशन, अजमेर, प्र.सं. अक्टूबर 1967, पृ.144
6. महाभारत, आदि पर्व, श्लोक सं. 83
7. मनुस्मृति, 3/232, पृ.158
8. दुबे, डॉ. हरिनारायण, पुराण समीक्षा, प्रथम संस्करण 1984, इन्टरनेशनल इंस्टिट्यूट फॉर डेव्लेपमेंट रिसर्च, इलाहाबाद, पृ. 57
9. Banerjee, Sures Chandra, Studies in Mahapuranas, Punthi Pustak, Calcutta, 1st Edition 1991, Pg. 16
10. Ibid.
11. Ibid, Pg. 45
12. Ibid, Pg. 48
13. मिश्र, विन्येश्वरी प्रसाद 'विनयः', श्रीमद्भागवततत्त्वबिन्दु, न्यू भारती बुक कॉर्पोरेशन, नई दिल्ली, प्र.सं. 2003, पृ.1
14. वही, पृ.27–28
15. श्रीमद्भागवत महापुराण, 2/1/5
16. वही, 6/1/6
17. वही, 6/1/7
18. वही, 10/1/4